



सामाजिक उपेक्षा मानसिक रोगियों को दोहरा आघात पहुँचाती है!

2007 में आई फलिम तारे ज़मीन पर एक ऐसे लड़के के इर्द-गिर्द घूमती है जो डसिलेक्सिया से ग्रस्त है। उसे पढ़ने-लिखने में समस्याएँ आती हैं लेकिन उसके माता-पिता या अध्यापक उसकी इस बीमारी को समझ नहीं पाते, फलस्वरूप उसके साथ उद्दण्ड बालक की तरह व्यवहार किया जाता है और उसे घर से दूर बोर्डिंग स्कूल भेज दिया जाता है। वास्तव में इस फलिम ने समाज में वदियमान उस गंभीर सामाजिक समस्या की ओर ध्यान आकृष्ट किया जिसमें मानसिक रोग से ग्रस्त लोगों के साथ समाज किस प्रकार से जाने-अनजाने में भेदभावपूर्ण और दमनात्मक व्यवहार करता है।

एक मनुष्य के लिये "आरोग्यमं परमं भाग्यं" "स्वास्थ्यं सर्वथा साधनम्" जैसे मूल्य वशेष महत्त्व रखते हैं। कोई भी व्यक्ति शारीरिक या मानसिक रूप से किसी भी प्रकार की वक्रीता से ग्रस्त नहीं होना चाहता, बल्कि वह एक स्वस्थ, स्थिर एवं खुशहाल जीवन व्यतीत करना चाहता है, कनितु यह सभी व्यक्तियों के साथ हमेशा-हमेशा के लिये संभव नहीं हो पाता। कभी-कभी जन्म से इन्सान कुछ अनुवांशिक कारणों से रोगग्रस्त रहता है या कभी कुछ दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएँ जीवन को वचिलित कर देती हैं। आज के इस आपाधापी भरे भौतिक जीवन में, जिसमें व्यक्ति चैन शुकून या प्रकृति सहज जीवन से दूर होता जा रहा है, समाज में मानसिक बीमारियों की व्यापकता बढ़ती ही जा रही है। ये मानसिक बीमारियाँ ही हैं जो कभी-कभी इतना गंभीर रूप ले लेती हैं कि इन्सान आत्महत्या जैसी दुष्प्रवृत्तियों तक का शिकार हो जाता है, वास्तव में यह आत्महत्या भी स्वयं में एक मानसिक रोग है।

इसी प्रकार फरि चाहे मंदबुद्धि जैसी स्थिति हो या सज़ोफ़रेनिया जैसी गंभीर मानसिक बीमारी हो, मानसिक रोग स्वयं में ही रोगी को गहरा आघात पहुँचाते हैं, उसके खुशहाल जीवन में वषि घोलने का काम करते हैं। इसीलिये मानव समाज का यह सामुदायिक दायित्व बनता है कि वह इस प्रकार से ग्रस्त लोगों के प्रति अपनी सहानुभूति रखे, प्रेमपूर्वक व्यवहार करे, साथ ही गरमिपूर्ण जीवन जीने में यथाशक्ति योगदान देता रहे। लेकिन जब समाज अपने दायित्वों से वमुख होकर, मानसिक रोगियों के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार करता है तो यह न केवल मानसिक रोगियों को दोहरा आघात पहुँचाता है, बल्कि उनके गरमिपूर्ण जीवन के संवैधानिक अधिकार और मानवाधिकार का भी दमन करता है।

समानता एवं गरमिपूर्ण जीवन जीने का अधिकार वास्तव में व्यक्ति का नैसर्गिक अधिकार है जिसे लोकतांत्रिक शासन पद्धति में मूल अधिकार के रूप में संवैधानिक अनुच्छेद 14 (समानता) एवं अनुच्छेद 21 (गरमिपूर्ण जीवन) के रूप में परभाषित किया गया है।

अब मूल प्रश्न यह है कि सिर्फ इसलिये कि कोई व्यक्ति किसी प्रकार की मानसिक बीमारी से ग्रस्त है जैसे पागलपन या उसमें सोचने-समझने, वचिर करने की उतनी सामर्थ्य नहीं है जतिनी सामान्य लोगों में होती है, तो क्या इसका मतलब ये हुआ कि उसके साथ दोगम दर्ज़े का व्यवहार किया जाए और उसके समानता के अधिकार का हनन किया जाए; यह मानवाधिकारों का उल्लंघन है। इस प्रकार का उपेक्षापूर्ण व्यवहार समाज के प्रत्येक स्तर पर देखा जा सकता है। खुद उसके अपने परिवार में ही उसके साथ अलग तरह से व्यवहार किया जाता है, उसे समझने एवं मदद करने की बजाय उद्दण्ड मानकर उसकी उपेक्षा या तरिसिकार करने की प्रवृत्ति रोगी पर अतरिकित दबाव डालती है। ऐसे में सवाल यह उठता है कि आखिर जतिने अधिकार एक स्वस्थ एवं सामान्य मनुष्य के हैं, उतने ही उतने ही उसके क्यों नहीं? फरि बात चाहे सनिमा की हो या मीडिया की, कला की हो या साहित्य की; कही पर भी समानता का नामों नशान नज़र नहीं आता।

अगर सनिमा की बात करें तो खामोशी, तारे ज़मीन पर और गुज़ारिश जैसी चंद फलिमें ही बनी हैं जनिमें इस वषिय पर रोशनी डालने की कोशिश की गई है। समाज में आदिकाल से व्याप्त एक गंभीर समस्या पर, समाज को सोचने और अपने भेदभाव पूर्ण व्यवहार को बदलने के लिये वविश कर देने जैसी एक गंभीर कसिम की सनिमाई प्रसतुती की आवश्यकता है, क्योंकि सनिमा की पहुँच की व्यापकता ही दर्शक मन पर गंभीर एवं स्थिर प्रभाव के इस कार्य को बेहतर तरीके से अंजाम दे सकती है। बलिकुल यही बात हमारी मीडिया के संदर्भ में भी लागू होती है। तालठोंक हल्ला-बोल जैसे ना जाने क्या-क्या उत्तेजक और अनुपयोगी वषियों के साथ व्वर्थ की चर्चा करते मीडिया जगत का ध्यान कभी भी गंभीरता पूर्वक समाज के इस वंचित वर्ग की ओर नहीं गया।

यदि प्रिंटि, इलेक्ट्रॉनिक और सोशल मीडिया ऐसे मानसिक रोग ग्रस्त लोगों की समस्याओं संवेदनशील ढंग से उठाएँ, उस पर चर्चा करें; समाज को, सविलि सोसाईटी को, राजनीतिक सत्ता से जुड़े लोगों को, वधिवित्ताओं, शक्तिषक, चकित्सक, स्थानीय प्रशासन से जुड़े लोगों को एक गंभीर संदेश दें; उन्हें इस चर्चा में भागीदार बनाएँ और इन सभी व्यवस्थाओं को वंचित वर्ग के कल्याण के प्रति ध्यान आकृष्ट करने के लिये प्रेरति करें तो नश्चिति की समाज का उपेक्षावादी रवैया कमज़ोर होगा और संवेदनशीलता में वृद्धि होगी।

समाज की यह संवेदनशीलता ही वास्तव में मानसिक रोगी की रामबाण औषधि है। समाज में हमारे समक्ष अनेक ऐसे उदाहरण गुज़रते हैं जनिमें नश्चिति व्यक्त भी अपनों के प्रोत्साहन से सफलता की बुलंदियों को छू लेता है। इसलिये आवश्यकता है तो इस उपेक्षित कनितु महत्त्वपूर्ण मसले को आम मीडिया द्वारा प्रमुखता से रखने की।

शक्तिषा और साहित्य जैसे दो आधारभूत स्तंभ भी इसी पहल का हसिसा हो सकते हैं, क्योंकि आज की शक्तिषा व्यवस्था में ऐसी वषियवस्तु एवं पाठ्य संरचना का सर्वत्र अभाव है जिससे व्यक्ति में स्वयं ही नरिशा-अवसाद जैसे मानसिक विकारों से लड़ने के सामर्थ्य का विकास संभव हो।

साथ-ही-साथ, इस बात की भी नतिांत कमी नज़र आती है कबिचपन से ही बच्चों को कसि प्रकार से वशिषिट मानसकि रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों के प्रतिसंवेदनशीलता का पाठ पढ़ाया जाए? शकिषा व्यवस्था में इस तत्त्व की कमी ने समाज में सामाजकि उपेक्षावादी प्रवृत्तको प्रोत्साहति कया है, सरिफ इतना ही नहीं बलकइस आभाव ने ऐसे समाज के नरिमाण को प्रोत्साहति कया है जो मानसकि व्याधग्रस्त वंचति वर्ग को समाज का हसिसा मानने को तैयार ही नहीं है, वे इन्हें इसी अवहेलना का अधिकारी मानते हैं।

वास्तव में शकिषा ही इस विकराल समस्या के समाधान में रामबाण सदिध हो सकती है। यही वह माध्यम है जो इस वंचति वर्ग के कल्याण की बात को साहित्य में स्थान दलाएगा और बौद्धकि जगत में इस अपवंचना को वरिमश का केन्द्र बनाकर इनका समाधान सुझाने को प्रेरति करेगा।

भारतीय समाज में तो गांधी, बुद्ध, महावीर, वविकानंद जैसे अनेक महापुरुष हुए जनिहोंने नर सेवा को ही नारायण सेवा मानकर, इसे अपने जीवन में उतारकर, सामाजकि उपेक्षा के शकिार लोगों को प्रोत्साहति कया है। भारतीय संवधान के भाग-3 और 4 में इनके कल्याण की बात स्वीकार कर एक प्रजातांत्रकि और समानतावादी समाज नरिमाण की बात की गई है। इसी के तहत 1987 में मानसकि स्वास्थ अधनियम भी बनाया गया, जसिमें हाल में ही संशोधन के प्रयास कयि जा रहे हैं ताकइसे और सशक्त बनाया जा सके। इसी तरह, मूल कर्तव्यों में भी लोगों से अपेक्षा की गई है कवै सभी नागरिकों की समानता का सम्मान करें।

मानसकि व्याधियों से ग्रस्त लोगों की समस्याओं का दीर्घकालकि एवं बहुआयामी समाधान जनसहभागति के माध्यम से ही संभव है। समाज के वभिन्न वर्गों को यह समझना होगा कविकृतग्रस्त कुछ लोगों से सहानुभूति एवं प्रेम एक ऐसे समाज के नरिमाण की बुनयाद होगी जहाँ कोई व्यक्ति अवसाद की वजह से आत्महत्या की ओर प्रेरति नहीं होगा, साथ ही इससे सामाजकि समरसता की स्थापना में भी मदद मलैगी क्योक मानसकि रोगी भी आखरि है तो इन्सान ही; इस संदर्भ में पूरव प्रधानमंत्री अटल जी की कुछ पंक्तियों बेहद उपयुक्त प्रतीत होती हैं-

**"सब स्वच्छंद यहाँ पर जन्में और मृत्यु सब पाएंगे,
फरि यह कैसा बंधन जसिमें मानव पशु से हो जाएंगे।"**

PDF Refernece URL: <https://www.drishtias.com/hindi/printpdf/social-neglect-brings-a-double-trauma-to-mental-patients>